श्रीरामचरितमानस खास क्यों?

गंगेश्वर सिंह
पूर्व पुलिस महानिदेशक, पश्चिम बंगाल
संप्रति सदस्य, कर्मचारी चयन आयोग,
पश्चिम बंगाल,

गोस्वामी तुलसी दास रचित रामचरितमानस विश्व प्रसिद्ध भक्तिमय महाकाव्य है। अपने उपास्य भगवान राम के जीवन चरित का अवगाहन करता यह ग्रंथ हिन्दी साहित्य के भक्तिकाल के रामाश्रयी शाखा का ध्रुवतारा है। गोस्वामी तुलसी दास ने इसकी रचना आमजन की भाषा अवधि में की यद्यपि वे संस्कृत के प्रकांड विद्वान थे। युग पुरुष तुलसी ने आम जनहितार्थ ऐसा किया था ताकि उनका संदेश और उनके उपास्य सगुण साकार राम के आदर्श चरित्र का अधिकतम प्रचार–प्रसार हो सके। शायद संस्कृत भाषा में रचित श्रीरामचरितमानस बहुजनहिताय बहुजनसुखाय वाले संदेश का वाहक नहीं बन सकता था।

तत्कालीन भारतीय समाज की अवस्था अति सोचनीय थी। हारे को हरिनाम वाली उक्ति ही तब चरितार्थ हो रही थी। ऐसे में समाज अर्न्तमुखी होने लगा था। उस कालखंड के राजनीतिक परिदृश्य के सिंहावलोकन करने से ज्ञात होता है कि मुगलशासक अकबर के शासनकाल में उत्तरी भारत में तुलनात्मक रुप से शांति थी। हिन्दू–मुस्लिम समन्वय भी तब बहुत हद तक स्थापित हो चुका था। साहित्य रचना के लिए यह आदर्श काल था। उस कालखंड में रचित हिन्दी साहित्य के एक से बढ़कर एक कृतियों के अवलोकन से स्पष्ट होता है कि सच में भक्तिकाल हिन्दी साहित्य का स्वर्णिमकाल था। कृष्णाश्रयी भक्ति शाखा के कवियों में एक ओर सूरदास हैं तो दूसरी ओर रसखान हैं। इतना ही नहीं नारी का प्रतिनिधित्व करती– पग घुंघरु बांध मीरा नाची रे भी मैदान में उतरी। निराकार भक्ति शाखा के प्रेमाश्रयी मार्ग के कवियों में कबीर, जायसी और रहीम ने भी ब्रज और अवधि में अपनी अनुपम कृतियों से हिन्दी साहित्य का श्रृंगार किया। तत्कालीन सामाज में व्याप्त जातिवाद, नस्लवाद और साम्प्रदायिकता, नारी–पुरुष के भेदभाव पर उक्त संत कविगण अपनी लेखनी से कुठाराघात ही तो कर रहे थे। थोड़ा विषयांतर हो गया।

अब अपने प्रतिपाद्य विषय रामचरितमानस पर लौटता हूं। तुलसीकृत श्रीरामचरितमानस उत्कृष्ट चरित महाकाव्य है। श्रीरामचरितमानस में महाकाव्य के तीनों लक्षणों के हम दर्शन पाते हैं जैसे–

★ कथाप्रबंध सात कांडों– बालकांड, अयोध्याकांड, अरण्यकांड, किष्किंधाकांड, सुन्दरकांड, लंकाकांड और उत्तरकांड में सर्गबद्ध है।

★ कथा के नायक राम संभ्रांत कुल के हैं।

★ इस महाकाव्य में साहित्य के मात्र एक रस नहीं बल्कि सारे रसों का समावेश है यद्यपि श्रृंगाररस, शांतरस एवं वीररस की इसमें प्रधानता है।

★ छंद प्रबंध की दृष्टि से श्रीरामचरितमानस अतिशय मनमोहक है। इसमें 10902 की संख्या में विविध छंदों का समावेश है। इसमें चौपाई (9388), दोहा (1172), सोरठा (87), श्लोक (47) और छन्द (208) सम्मिलित हैं। संस्कृत भाषा का न्यूनतम प्रयोग है। सम्पूर्ण रचना गेयशैली में है। अवधि की प्रधानता है पर ब्रज, फारसी, भोजपुरी, बुंदेलखंडी का भी यथेष्ट प्रयोग देखने को मिलता है और भाषा के ये शब्द सहज, सरल और तरल शैली में प्रयुक्त है। तुलसी के भावप्रवाह में भाषा रुकावट बनती नहीं दिखती। भावप्रवाह निष्कंटक गतिशील सा दिखता है। तुलसी ने श्रीरामचरितमानस में आद्यांत कहीं भी अपने काव्यकौशल, पाण्डित्य और उबलते ज्ञान का जबरन प्रदर्शन नहीं किया है। अपनी बात कहने में वे सर्वदा मौलिक दिखते हैं। साथ ही अपनी परम्परा के मुनिजनों और गुरुजनों के प्रति उतने ही कृतज्ञ भी। उनकी परम्परा तो आदि कवि बाल्मीकि रामायण की ही है और गुरु नरहरि के शिष्य होना स्वीकार करते दिखते हैं। पर बालकांड के आरंभिक चरण में वे यह कहते भी नहीं झिझकते– भाषाबद्ध करबि मैं सोई। मोरें

मन प्रबोध जेहिं होई, जस कहु बुद्धि विवेक बल मेरे। तस कहिहऊं हियं हरि के प्रेरे।।

श्रीरामचरितमानस के प्रत्येक कथानक और इसके वाहक चौपाई, दोहे, सोरठा आदि के मूलतः तीन पक्ष हैं– साहित्यिक, अध्यात्मिक एवं लौकिक (व्यवहारिक)। इसके साहित्यिक पक्ष पर मैंने अपने विचार अपने लेख की भूमिका के अन्तगर्त रखे हैं। अब मैं मानस के कुछेक कथानकों और चरित्रों के माध्यम से इसके अध्यात्मिक और लौकिक पक्ष पर थोड़ी सी चर्चा करना उचित समझता हूं।

चार बार, चार स्थान, चार वक्ता, चार श्रोता

मूलतः राम के साकार (रामचरित्र) और निराकार (रामतत्व) का गुणगान और बखान ही रामकथा है। मेरी समझ से मानस में रामकथा चार बार, चार भिन्न स्थानों पर चार वक्ता द्वारा चार श्रोता के निमित्त कही गयी है।

भारद्वाज मुनि के आग्रह पर याज्ञवल्क्य ऋषि ने उन्हें यह कथा सुनायी थी। कथास्थल है प्रयाग के संगम पर भारद्वाज मुनि का आश्रम। भारद्वाज की जिज्ञासा को शांत करने के निमित्त याज्ञवल्क्य ने उन्हें रामकथा सुनायी। इस कथा में राम के चरित्र पर नहीं बल्कि रामतत्व पर चर्चा हुई। श्रोता–वक्ता दोनों ज्ञानी हैं। दूसरी रामकथा में भगवान शिव अपनी अर्दधांगिनी पार्वती के अनुरोध पर अपने निवास कैलाश पर्वत पर राम के जीवन चरित्र का रसमय गान करते हैं। राम के प्रति पार्वती के इस अनुराग के मूल में उनके विगत जन्म वाला संदेह है। यहां राम के सगुण–साकार रुप की चर्चा है। वह भी वक्ता शिव द्वारा और स्थान है अध्यात्म की नगरी कैलाश। वैसे तो शिव रामचरित्र के रचयिता भी हैं– रचि महेश निजमानस राखि।

तीसरी रामकथा के श्रोता और वक्ता दोनों परिंदे है– गरुढ़ और काकभुसुण्डी (कौवा)। स्थान है नीलगिरी पर्वत। उपास्य के प्रति उपासक की आस्था और विश्वास कभी भी डगमगा सकती है। गरुढ़ के साथ भी वही हुआ। लंका में राम– रावण के युद्ध के दौरान नागपाश में आबद्ध होने के बाद राम विवश निरुपाय थे। गरुढ़ ने आकर उन्हें नागपाश से मुक्त किया था। गरुढ़ तो विष्णु के वाहन है। साथ– साथ रहते हैं। भगवान राम की विवशता ने गरुढ़ की आस्था को हिला दिया। गरुढ़ विषादग्रस्त होकर काकभुसुण्डी के पास रामकथा सुनने गये। इस रामकथा के वक्ता काकभुसुण्डी की स्वयं की कथा विचित्र है। वे शिवोपासक से विष्णुपासक बने। गुरु को शिवालय में प्रणाम न करने के अपराध में स्वयं शिव द्वारा शापित हुए। शैव–वैष्णव और फिर वर्णव्यवस्था के अर्न्तघात की एक हल्की झलक इस प्रसंग में दिखती है।

चौथे प्रसंग में मानस के रचयिता तुलसीदास रामकथा अपने मन को सुनाते दिखते हैं। वे मानस के अंत में कहते हैं– पाई न केहि गति पतित पावन राम भज सुनु सठ मना। रामकथा का खजाना से लबालब रचयिता का मन भी शायद डांवाडोल रहता होगा। तुलसी दास का यह संदेश बड़े काम का है। मन की गति न्यारी है। यह ज्ञान, भक्ति और कर्म से शांत नहीं रहता है। चंचलता इसकी प्रवृति है। अतएव उस पर सदैव पहरेदारी की जरुरत है।

तुलसी पर सवाल क्यों?

तुलसी दास ने बाल्मीकि रामायण के बहुत सारे प्रसंगों को अपने रामचरितमानस में स्थान नहीं दिया है। इसके बावजूद मानस के ढेर सारे कथानक, प्रसंग और उसके चरित्र पर आज का आधुनिक समाज अंगुली उठा रहा है। कहते हैं न कि साहित्य समाज का दर्पण होता है। तुलसीकालीन समाज की दशा के प्रतिबिंब ही मानस में यत्र–तत्र दिखते हैं। ताड़का बध, सीता की अग्नि परीक्षा, सुपर्णनाखा के नाक–कान काटना जैसे प्रसंग समर्थन योग्य नहीं हैं। इसी तरह वर्ण व्यवस्था और जाति–पाति से जुड़े कई विवादित प्रसंग हैं जो राम–केवट प्रसंग, राम–शबरी प्रसंग, राम–गुहराज प्रसंग, राम–सुग्रीव प्रसंग, सेतु बंधन आदि को धूमिल कर देते हैं।

निःसंदेह तुलसीकृत रामचरितमानस मानव मात्र के लिए एक अनुपम उपहार है जो न केवल जीवन जीने की दिशा दिखाता है बल्कि हाथ थामे आगे–आगे चलता भी है। कई कारणों से काशी के प्रबुद्ध वर्ग ने तुलसी की इस रचना के लिए जमकर आलोचना की थी तब उन्हे कहना पड़ा था–मांगि के खैबो, मसीत को सोइबो लैबो को एक न दैबो को दोऊ। फादर बुल्के को मानस की यह चौपाई– परहित सरिस धरम नहिं भाई, परपीड़ा सम नहीं अधमाई– ने उन्हें तुलसी का दीवाना बना दिया था।

आज तो तुलसी दास के सुझाये जीवन दर्शन की और भी जरुरत है। जब स्वार्थपरता, छिनाझपटी, संबंधों में दरार और टकरार के साथ शहरीकरण से उपजे एकांकीपन, अवसाद जैसी मानसिक व्याधि के हम सब शिकार हो रहे हैं। तुलसी का समन्वयवादी दृष्टिकोण पूरे श्रीरामचरितमानस में प्रतिबिंबित होता दिखता है यद्यपि इसके कतिपय अपवाद भी हैं। लगता है तुलसी दास को इसका आभास मिल रहा था तभी तो वे मानस में जगह–जगह कहते हैं– सुमति कुमति सबके उर रहही।

एक पिता के विपुल कुमारा होहिं पृथक गुनशील अचारा।

सीयाराम मैं सब जगजानी। करऊ प्रणाम जोरी युग पानी।

होइहि सोई जो राम रचि राखा को करि तर्क बड़ावै साखा।

सिय राममय सब जग जानि। करउं प्रनाम जोरि जुग पानी।

अखिल विश्व यह मोर उपाया। सब पर मोहि बराबरि दाया।

तुलसी दास के रामचरितमानस ने सनातन धर्म को कुसंस्कार, आडंबर, विविध विधिविधान की जंजीरों से मुक्त कर आमजन के लिए सुलभ, बोधगम्य और सरल बना दिया। मानस की निम्न चौपाइयां इसी ओर संकेत करतीं दिखती हैं –

नहिं कलि करम न भगति बिबेकू। राम नाम अवलंबन एकू।।

राम सकल नामन्ह ते अधिका। होउ नाथ अघ खग गन बधिका।।

रामहि केवल प्रेम पियारा जानि लेहु जो जाननहि हारा।